श्रमिक और वेतन

—रामनरेश सिंह

श्रमिक और वेतन

राष्ट्रीय अर्थ व्यवस्था में वेतन और मजदूरी का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है। राष्ट्रीय आय में एक तिहाई हिस्सा वेतन और मजदूरी से प्राप्त होता है, जबकि ४३ प्रतिशत आय अपने-अपने रोजगार में लगे लोगों द्वारा और २४ प्रतिशत आय जायदाद से प्राप्त की जाती है।

वेतन और मजदूरी से आय पाने वाले संगठित क्षेत्र में कार्यकरों की संख्या लगभग सवा दो करोड़ हैजब कि देश में कार्य करने वालों की समूची संख्या लगभग २० करोड़ है। सवा दो करोड़ व्यक्ति सार्वजनिक क्षेत्र के प्रतिष्ठानों, केन्द्रों और राज्य सरकारों के कार्यालयों और योजनाओं, स्थानीय निकायों तथा निजी क्षेत्र के उद्योगों आदि में काम करते हैं। मोटे तौर पर केन्द्र सरकार के ३५ लाख, राज्य सरकारों के पचास लाख, सार्वजनिक क्षेत्र के प्रतिष्ठानों के ३५ लाख, स्थानीय निकायों के २० लाख, तथा निजी क्षेत्र के ७० लाख कर्मचारी सेवा रत है।

वेतन को लेकर ही अधिकांश श्रमिक समस्यायें उत्पन्न होती हैं। यह औद्योगिक एवं श्रम जगत का अत्यन्त जटिल, दुरुह, विषम तथा नाजुक विषय है। वेतन से जहां एक ओर किसी उद्योग की दक्षता, क्षमता एवं अर्जन शक्ति का पता चलता है, वहीं दूसरी ओर यह श्रमिकों की क्रय शक्ति, उनके जीवन स्तर एवं राष्ट्र की समृद्धि का परिचायक भी है। बिना वेतन के किसी श्रमिक की कल्पना नहीं की जा सकती। श्रमिक का दूसरा नाम वेतन भोगी ही है।

वेतन की परिभाषा

- श्रम का मूल्य है।
- श्रमिक द्वारा अपने बेचे गये श्रम का मूल्य है।
- श्रमिक द्वारा उत्पादन प्रक्रिया में लगाये गये श्रम का पारिश्रमिक है।
- श्रमिक द्वारा उत्पादन प्रकिया में लगाये गये उसके श्रम का धन के रूप में अदा किया पारिश्रमिक है।
- पूंजीपति पूंजी लगाता है तथा श्रमिक वर्ग अपना पसीना अथवा श्रम लगाता है। दोनों बराबर के भागीदार हैं। श्रम अथवा पसीने का अपना भाग वेतन है।
- वेतन भुगतान अधिनियम (४), १९३६ के अनुसार "वेतन से तात्पर्य उस समस्त देय धन से है (चाहे वह परिश्रमिक, भत्ता अथवा अन्य हो) जो कि सेवा की शर्तों के अनुसार नियुक्त किये गये व्यक्ति को उसकी सेवा अथवा किये गये कार्य के परिणाम स्वरूप नकद राशि के रूप में दिया जाता है।"

वेतन क्रम अथवा मजदूरी के अन्तर

शुक्र नीति में कहा गया है कि राजा (सेवायोजक) को चाहिए कि वह मानवीय गुणों के भेदों को ध्यान में रखता हुआ पूर्ण सतर्कता से और प्रयत्न पूर्वक समुचित वेतन क्रम स्थापित करे।

औसत श्रमिक के पास आज कोई ऐसी निर्देशक रेखायें नहीं हैं कि वह जान सके कि उसे कौन से मानवीय गुणों की वृद्धि करनी चाहिये ताकि वह इमानदारी और न्यायपूर्ण विधि से अधिक कमा सके। हमारे यहां कार्य

विश्लेषण एवं कार्य मूल्यांकन के आधार पर वेतन के अन्तरों को निर्धारण करने में आज भी शास्त्रीय विधि के प्रयोग में संकोच बना हुआ है। बिना किसी राष्ट्रीय नीति के मजदूरी के अन्तरों को निर्धारित करने हेतु निर्देशक रेखायें न देने के कारण पुरुषों और महिलाओं के उपयोगी आर्थिक गुणों की प्रगति के लिये मार्ग प्रशस्त नहीं हो पा रहा है।

शिक्षा ट्रेनिंग, अनुभव, शारीरिक व बौद्धिक श्रम, महत्वपूर्ण व खतरे के कार्य आदि के अलग-अलग कितने अंक निर्धारित किये जांय–निर्णय करने की आवश्यकता है।

कई देशों ने इस विषय में अपने अपने ढंग से प्रयास किये हैं। जैसे–

१. कार्य सम्बन्धी प्रशिक्षण और ज्ञान जिसमें सैद्धांतिक ज्ञान और व्यावहारिक प्रशिक्षण सम्मिलित हो।

२. शारीरिक गुण जिनमें स्नायु चालक और शक्ति सम्बन्धी गुण सम्मिलित हों।

३. बौद्धिक और मानसिक गुण (एकाग्रता स्मरण शक्ति, अनुसंधान वृत्ति, निर्णय लेने की शक्ति आदि।

४. चरित्र और व्यवहार।

५. पद सम्बन्धी परिस्थितियों (वातावरण का प्रभाव, दुर्घटनाओं के खतरे तथा बीमारी के जोखिम आदि) इस प्रकार से विभाग किये हैं।

भारतीय मनोवैज्ञानिकों ने सामान्य विश्व की क्रियाओं को ३ भागों में बाटा है। अर्थात वह शरीर, जीवन और मस्तिष्क से सम्बन्धित हैं। उन पदों और क्रियाओं को लें, जो मनुष्य के लिये अत्यन्त आवश्यक है, किन्तु उनके क्रियान्वयन में यंत्रवत और कम बुद्धि के प्रयोग की आवश्यकता होती है।

इसमें शारीरिक गुणों, शारीरिक शक्ति, हाथ पैर तथा स्नायुओं की शक्ति का प्रयोग करना पड़ता है। नेत्रों से देखने व वायुमंडलीय तत्वों के हेर फेर जैसे तापमान व मौसम परिवर्तन तथा ध्वनि, घ्राण, रात्रि के कार्य, भूमिअथवा समुद्र के ऊपर या नीचे किये जाने कार्य आदि की आवश्यकता होती है। इनके अतिरिक्त कुछ कार्यों में श्रमिक को जीवन का खतरा, दुर्घटना बीमारी आदि का जोखिम उठाना पड़ता है। कुछ ऐसे कार्य हैं जिनमें गति, तत्परता स्पष्टता, जीवटपन आदि गुणों की आवश्यकता पड़ती हैं। कुछ ऐसे भी कार्य हैं, जिनमें स्वच्छता व्यवस्थित व्यवहार, मधुर आवाज हाथों की नफाशत तथा स्त्रियोचित गुणों जैसे अस्पताल में बच्चों की देख-रेख की आवश्यकता होती है। कुछ ऐसे कार्य है, जैसे सैनिक सदस्य सेवा में असमान्य दृढ़ता, जीवटपन, शक्ति और शारीरिक संघर्ष के गुणों की आवश्यकता होती है। मोटर व सामान्य यंत्र को चलाने के लिये साधारण कुशलता की आवश्यकता पड़ती है।

मानवीय गुणों में ही जीवन की शक्तियां हैं। एक प्रावधिक सेवा की आवश्यक कुशलता, नियामक और आदेशात्मक प्रशासन, समझ व उनका निर्देशन सहयोगी वृत्तियाँ, उत्तरदायित्व वहन करने की क्षमता, स्वच्छ लेखा प्रस्तुत करने की योग्यता, स्फूर्ति युक्त नेतृत्व करने की शक्ति निर्णय लेने की क्षमता से धन के संग्रह और उपयोग, विक्रयशीलता, मनोबल को ऊंचा उठाने त्वरित समायोजन करने आदि गुणों की आवश्यकता होती है।

जीवन की शक्तियों से मस्तिष्क के गुणों की ओर हम बढ़ें। वहां पर प्रतिष्ठा है और सम्मान है। अपनी योग्यताओं के सतत व पूर्ण प्रयोग के अवसर हैं। यह मोड़ हमें एक अध्यापक, एक वैज्ञानिक, एक सामाजिक कार्यकर्ता, एक न्यायाधिपति या किसी विशेषज्ञ, कलाकार दार्शनिक आदि में दिखाई दे सकता है। वह अपने सद्- गुणों के विकास से सन्तुष्ट रहता है, परन्तु उसे उन सुविधाओं की आवश्यकता रहती है, जो उक्त गुणों के विकास हेतु भौतिक

चिन्ताओं से मुक्त रख सके। इन गुणों का विकास पर्याप्त वेतन-अन्तरों के रूप में अधिक धन फेंक कर नहीं किया जा सकता है, जितना कि प्रतिष्ठा और सम्मान की भावना से किया जा सकता है। इन सेवाओं की सुन्दरता,प्रतिष्ठा के प्रेम पर आधारित है। उच्च और गम्भीर विचार, आदर्श चरित्र, सत्य और स्पष्टवादिता, खुला मस्तिष्क, और सतत गवेषणा करने वाली बुद्धि-इनका मूल्य तो अनमोल है। स्वभाव में सन्तुलन तो धैर्य, स्थिरता और शान्ति से निर्माण होता है। ऐसे व्यक्ति बाहर से कम व्यस्त दिखाई पड़ते हैं, तथा कम उत्पादक मालूम होते हैं, परन्तु उनकी उपस्थिति कार्य व कल्पना शक्ति में दस गुनी स्फूर्ति भर देती है तथा विश्वास जगा देती है। ऐसे व्यक्तियों का स्थान समाज में बहुत ऊंचा है। इनकी नाप तौल केवल आर्थिक आधार पर नहीं की जा सकती जैसा कि अन्य वर्णित दो वर्गों के लिये सम्भव है। इस प्रकार की सेवाओं के सन्दर्भ में वेतन प्रत्यन्तरों के प्रति दृष्टिकोण ही बदल जाता है तथा प्रतिष्ठा की श्रेणी उसका स्थान ग्रहण कर लेती है। ऐसे समुदाय को अच्छी जीवन व्यवस्था प्राप्त होनी आवश्यक है। अपने देश में मानवीय प्रयत्नों के लिए योग्य दिशा प्राप्त हो सके, इसके लिये यह आवश्यक है कि मजदूरी प्रत्यन्तरों और प्रतिष्ठा प्रत्यन्तरों की एक समन्वित व्यवस्था के माध्यम से मानवीय मूल्यांकन और पुरस्कार की व्यवस्था के सही मापदण्ड निर्धारित हों।

मोटे रूप में वेतन क्रमों को निर्धारित करने में उक्त गुणों को सामने रखकर निदेशक रेखायें खींची जानी चाहिए।

मंहगाई भत्ता व असली वेतन की सुरक्षा

कहा गया है कि आर्थिक विकास के वृहत हितों की रक्षा के लिये श्रमिकों की यथार्थ मजदूरी नीची नहीं होनी चाहिये। मंहगाई भत्ते की

व्यवस्था को श्रमिक विश्व भर में कहीं भी पसन्द नहीं करते। दुख इस बात का है कि अपने देश में उत्पादकता में मिलने वाला कोई भी हिस्सा श्रमिकों को नहीं दिया जाता। कुछ थोड़े से लोगों के पास धन में बृद्धि हो रही है, परन्तु श्रमिकों की वास्तविक मजदूरी नीचे जा रही है, फिर भी उस पर उलटा ही आक्षेप लगाया जाता है कि वे अर्थ व्यवस्था में एक लागत प्रेरित मुद्रा स्फीति उत्पन्न कर रहे हैं। भारतीय श्रमिक तेजी से बढ़ते हुये मूल्यों के संदर्भ में तेजी से अपनी वास्तविक मजदूरी को गंवा रहा है। वास्तविक मजदूरी के लिए पूर्ण सुरक्षा की उसकी मांग के पीछे सभी नैतिक और आर्थिक समर्थन है। मंहगाई भत्ते की आधारभूत नीति वही होनी चाहिए, जिससे वास्तविक मजदूरी की सुरक्षा हो सके। किसी भी कीमत पर किसी भी श्रमिक की वास्तविक मजदूरी को समुचित जीवन लागत निर्देशांक के अनुसार शत प्रतिशत प्रभाव निरसन की स्थिति से जरा सा भी कम करने में कोई न्याय संगत उक्ति नहीं है। आज तक वास्तविक मजदूरी और उत्पादकता के बीच कोई सुविचारित सम्बन्ध स्थापित नहीं किया गया है। स्थिति यह है कि वास्तविक मजदूरी गिर रही है और श्रम उत्पादकता में बृद्धि हो रही है। आवश्यकता तो यह है कि मंहगाई-भत्ता वेतन में सम्मिलित कर देना चाहिए और सम्पूर्ण वेतन को प्रत्येक स्तर पर एक निर्देशांक से सम्बद्ध करना चाहिए। जहां तक सम्भव हो बिन्दु से विन्दु और महीने से महीने के अनुसार सम्बन्धित जीवन निर्वाह निर्देशांक के वृद्धिमूलक स्थिति से गणना की जानी चाहिए। एक विभाजित वेतन पैकेट नहीं, वरन् निर्देशांक-बद्ध वेतन पैकेट की व्यवस्था होनी चाहिए, जिसमें मूल वेतन और मंहगाई भत्ता एक साथ हो। वास्तविक मजदूरी श्रम उत्पादकता तथा मूल्यों की बृद्धि के साथ बढ़ती रहे।

झालरी भत्ता अथवा अन्य भत्ते

श्रमिकों में वितरण करने के लिये हमारे देश में कुल कोष बहुत ही

सीमित है। उसका अधिकतम उपयोग किया जाना आवश्यक है। अति सुन्दर कैन्टीन व्यवस्थायें व आवास की निकटता के कारण अनुभव में आया है कि मजदूरों की अनुपस्थित को कम करने में ये बड़ी सहायक सिद्ध हुई है। हमारे देश में अभी तक सामाजिक सुविधाओं पर किये गये व्ययों का श्रम शक्ति के गुणों पर पड़ने वाले प्रभाव को स्पष्ट आंकिक आधार पर नापने की विधि का विकास नहीं हो सका है। इसीलिये झालरी भत्तों से श्रम के गुणों की वृद्धि का पता नहीं चल पाया है।

झालरी भत्तै के सम्बन्ध में यह भी एक विचार व्यक्त किया गया है कि झालरी भत्ते देकर सेवायोजक अपनी इच्छाओं और योजनाओं के अनुसार कर्मचारियों को सुनहरी जंजीरों में बांध देते है। एक मकान जिसे किसी कर्मचारी को एलाट कर दिया जाए, जिसका वह अपने सम्पूर्ण कार्यकाल में स्वामी भी नहीं बन सकता और जिसका उपयोग वह निर्धारित नियमों के अनुसार ही कर सकता है एक ऐसा अहसान है जो कि श्रमिक को स्वतन्त्र प्रकार से व्यवहार करने से रोकता है। इसीलिए श्रमिकों में यह विचार भी सामने आया है कि "हमें जो कुछ भी देना हो मजदूरी के रूप में कुल दे दो, हम जैसे चाहेंगे उसे व्यय करेंगे।"

इसके लिए सही दृष्टिकोण यह होगा कि इन झालरी भत्तों को सामुदायिक सेवायें माना जाय और उन्हें एक राष्ट्रीय, सामाजिक व आर्थिक लक्ष्य की प्राप्ति में औद्योगिक समुदायों की स्थापना की योजना का अंग बना दिया जाय। मजदूरी के सम्बन्ध में चर्चा के बीच किसी भी समय झालरी भत्तों की मौद्रिक गणनाओं को वेतन के परिमाण को प्रभावित करने के लिए मान्य नहीं करना चाहिये। अनेक प्रकार की सुविधाओं के लिये जैसे निःशुल्क आवास व कैन्टीन आदि की समस्या-इस माने में कठिन है कि उनकी उस प्रकार से गणना की जा सके, ताकि झगड़े से सम्बन्धित सभी पक्ष संतुष्ट हो सकें।

आज विशेष रूप से बड़े नगरों के क्षेत्रों, नई बनी हुई नगरियों और औद्योगिक कालोनियों में कर्मचारियों को आवासीय सुविधा मिलनी ही चाहिए इन सुविधाओं में कम से कम कार्य स्थान की सुविधायें जैसे जलपानगृह, शौचादि की सुविधा, स्नानागार, प्राथमिक चिकित्सा आदि, तथा बालकों की देखभाल की व्यवस्था, जहां स्त्रियां कार्य करती हों होनी ही चाहिये। तात्पर्य यह कि झालरी भत्ते देने में सभ्य जीवन की अन्य सभी मूल भूत आवश्यकतायें सम्मिलित की जानी चाहिये।

न्यूनतम मजदूरी

यह निर्विवाद है कि न्यूनतम मजदूरी के कानून को बनाना और उसका पालन कराना अत्यन्त आवश्यक है और उसके क्षेत्र का इतना प्रसार किया जाना चाहिये, जिससे समस्त गैर औद्योगिक श्रमिकों को भी सम्मिलित किया जा सके। राज्य सरकारों ने इस दिशा में कुछ कदम अवश्य उठाये हैं किन्तु सम्पूर्ण देश के लिए न्यूनतम मजदूरी के नियमों एवं प्रतिमानों को समानता के प्रयत्न की ओर वे कदम नहीं हैं।

न्यूनतम मजदूरी को निर्धारित करने में एक खतरा और है, वह यह कि जब किसी पेशे के लिए एक बार न्यूनतम मजदूरी तय कर दी जाती है तो वही न्यूनतम, अधिकतम मजदूरी बना दी जाती है तथा अत्यन्त सम्पन्न संस्थान भी अपने कर्मचारियों को वही न्यूनतम मजदूरी देने में संतोष करता है।

न्यूनतम मजदूरी के निम्नतम स्तर का प्रथम लक्ष्य यह हो सकता है कि हम ऐसे पग उठावे कि श्रमिक या उसके परिवार जीवन निर्वाह की वर्तमान आवश्यकताओं को बिना किसी ऋण या उधार लिये पूरा कर सकें।

न्यूनतम मजदूरी मुख्य रूप से वह है, जो एक न्याययुक्त न्यूनतम हो और उसे दिया ही जाना चाहिये, चाहे सेवायोजक की देय क्षमता कितनी भी हो। यह कानूनी न्यूनतम ऐसा होना चाहिए जो मानव के जीवन निर्वाह की सभी न्याय संगत आवश्यकताओं की पूर्ति कर सके।

न्यूनतम मजदूरी के उच्च स्तरों की निश्चिति के लिये प्रत्येक संस्थान के अनुसार कार्यशील पूंजी, संस्थान के आकार, कर्मचारियों की संख्या आदि को आधार बनाया जा सकता है।

न्यूनतम वेतन, वेतन का वह स्तर है, जिसके नीचे का वेतन किसी भी श्रमिक को नहीं दिया जा सकता।

न्यूनतम वेतन से श्रमिक न केवल जीवन की मूल आवश्यकताओं की पूर्ति ही कर सकता है वरन् शिक्षा, चिकित्सा आदि आवश्यकताओं एवं सुविधाओं की भी पूर्ति कर सकता है, जिससे श्रमिक की कुशलता को बनाये रखा जा सके। दूसरे शब्दों में न्यूनतम वेतन से श्रमिक की कुशलता बढ़ाई नहीं जा सकती, न ही इसमें कमी हो सकती हैं, केवल इसे बनाये रखा जा सकता है।

राष्ट्रीय न्यूनतम वेतन की भी इस समय चर्चा हो रही है इस विषय पर यह भी महत्वपूर्ण विचार सामने आया है कि देश में विभिन्नताओं एवं विषमताओं के कारण राष्ट्रीय न्यूनतम वेतन की अपेक्षा क्षेत्रीय न्यूनतम वेतन या राज्य स्तर का न्यूनतम वेतन निर्धारित करना ज्यादा ठीक होगा।

आवश्यकता पर आधारित न्यूनतम वेतन

आवश्यकता पर आधारित न्यूनतम वेतन के सम्बन्ध में सर्व प्रथम १५ वें भारतीय श्रम सम्मेलन में विचार व्यक्त किया गया था। इसके

अतिरिक्त द्वितीय वेतन आयोग, उचित्त वेतन समिति तथा कई अन्य द्विपक्षीय एवं विशेषज्ञ समितियों ने भी इस विषय पर चर्चा की थी। राष्ट्रीय श्रम आयोग ने इस विषय पर विस्तार से विचार विमर्श किया। इन सभी चर्चाओं एवं विचार विमर्श का यही परिणाम निकला है कि आवश्यकता पर आधारित न्यूनतम वेतन को श्रमिकों को मुहैया कराना ही चाहिये। यह वेतन न्यूनतम वेतन तथा उचित वेतन के बीच के स्तर को प्रदर्शित करता है। भारतीय श्रम सम्मेलन ने इसकी परिभाषा को स्पष्ट करते हुए बताया हैं कि "आवश्यकता पर आधारित वेतन, वह न्यूनतम वेतन हैं जो किसी भी अन्य बात का विचार किये बिना श्रमिक की मूल मानवीय आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए पर्याप्त हो।"

आवश्यकता पर आधारित न्यूनतम वेतन, वैधानिक न्यूनतम वेतन से एक अगला कदम है। इसके अनुसार श्रमिक का न्यूनतम वेतन निर्धारित करते समय उसकी कुछ आधारभूत मानवीय आवश्यकताओं को भी ध्यान में रखा जाता हैं। इस प्रकार से यह वास्तव में आवश्यकता पर आधारित न्यूनतम वेतन है, जिसमें उद्योग की देय क्षमता निरपेक्ष है।

उचित वेतन

उचित वेतन समिति के अनुसार यह वेतन न्यूनतम तथा जीवन निर्वाह वेतन के मध्य का होता है अर्थात उचित वेतन की निम्न श्रेणी तो न्यूनतम वेतन से निर्धारित होती है तथा उच्चतम सीमा जीवन वेतन से निश्चित की जाती है। उचित वेतन की सीमा रेखा न्यूनतम तथा निर्वाह वेतन के मध्य ही झूलती रहती है, जो कि सामूहिक सौदेबाजी की शक्ति, उपभोक्ता मूल्य सूचकांक, उत्पादकता, उद्योग की देय क्षमता समीपस्थ वेतन दरें एवं राज्य की वेतन नीति तथा तत्सम्बन्धी कानून आदि के आधार पर निर्धारित की जाती है। उचित वेतन की प्रवृत्ति भी आर्थिक विकास की

दर के साथ बढ़ने की है। अन्ततोगत्वा उचित वेतन की सीमा उद्योग की देय क्षमता से ही निश्चित होती है।

जीवन निर्वाह वेतन

जीवन निर्वाह वेतन सबसे उच्च वेतन स्तर को प्रदर्शित करता है। यह उचित वेतन से भी अधिक होता है। यह एक प्रकार से वेतन स्तर की उच्चतम सीमा है, जिसके ऊपर फिर कोई भी वृद्धि राष्ट्रीय अर्थ व्यवस्था के लिये लाभप्रद नहीं हो सकती है। यह वेतन-स्तर वेतन-बृद्धि की चरम सीमा है। उचित वेतन समिति के अनुसार जीवन निर्वाह वेतन, की सर्वोच्च सीमा है। जब अर्थ व्यवस्था पर्याप्त मात्रा में विकसित हो जाय तथा नियोजक भी श्रमिक की बढ़ती आशाओं को पूरा करने योग्य हो, तब श्रमिक को इतना वेतन दिया जाता है, जिससे कि वह एक सभ्य समाज में सभ्य नागरिक की भांति अपना जीवन यापन कर सके। "जीवन निर्वाह वेतन एक ऋण की इच्छा के समान है, जो थोड़ा थोड़ा बढ़ता रहता है, परन्तु कहीं उसका ठहराव नहीं है, अन्त नहीं है।" जीवन निर्वाह वेतन वास्तव में एक श्रमिक के लिए पर्याप्त वेतन है, वेतन सीमा है, जो श्रमिक के जीवन को सुखमय व्यतीत करने हेतु साधन प्रदान करनी है।

इस प्रकार न्यूनतम मजदूरी, आवश्यकता पर आधारित वेतन, न्यायपूर्ण मजदूरी, तथा जीवन निर्वाह मजदूरी—ये सभी न तो स्थिर हैं और न ही स्थायी। राष्ट्रीय अर्थ व्यवस्था के विकास एवं प्रगति के साथ साथ उक्त प्रतिमानों में भी सुधार होते रहना आवश्यक है।

वेतन पुनःनिर्धारण के ढंग

आज वेतन पुनःनिर्धारण के कई तरीके प्रचलित हैं। इसके कारण

विभिन्न उद्योगों के वेतन को अन्तरों का आलोचना की दृष्टि से स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। संराधन, अभिनिर्णय (न्यायिक निर्णय), पंच निर्णय द्विपक्षीय पद्धति, वेतन मण्डल, वैधानिक प्रावधान तथा सामुहिक सौदेबाजी आदि वे तरीके हैं।

(क) वैधानिक प्रावधान—न्यूनतम वेतन अधिनियम के अन्तर्गत प्राविधान है कि सूची में वर्णित उद्योगों हेतु विभिन्न वेतन दरों का सम्बन्धित राज्य सरकारों द्वारा प्रति ५ वर्ष के उपरान्त पुनर्निर्धारण किया जायगा। इस हेतु अधिनियम में सम्बन्धित तन्त्र, अधिकारी व्यवस्था एवं प्रक्रिया आदि का भी निर्देशन किया गया है।

(ख) वेतन मण्डल–सम्बन्धित सरकारों द्वारा इस हेतु विभिन्न उद्योगों आदि के लिये समय-समय पर वेतन आयोगों तथा वेतन समितियों आदि की नियुक्ति की जाती है, जिनकी सिफारिशों के आधार पर वेतन का पुनर्निधारण किया जाता है। ये औद्योगिक सम्बन्धों में उपभोक्ता को एक पक्ष के रूप में लाती हैं। किन्तु एक खराबी भी है–इनके निर्णय को बहुत सी इकाइयाँ पालन नहीं करती। क्योंकि उनके निर्णयों के पालन हेतु कोई भी कानूनी अधिकार नहीं है।

(ग) न्यायालय—औद्योगिक विवाद की अवस्था में विभिन्न न्यायालयों द्वारा दिये गये निर्णयों के आधार पर भी वेतन का पुनर्निर्धारण किया जाता है। इस व्यवस्था में ट्रेड यूनियन आन्दोलन की मंशा समाप्त हो रही है। तथा प्रबन्ध और श्रमिक के मामले को तीसरे के हाथ में सौंप देता है।

(घ) पंच निर्णय–नियोक्ता और श्रमिकों की परस्पर सहमति पर यह मामाला वे स्वेच्छापूर्वक किसी पंच को सौंप सकते हैं और इस प्रकार पंच फैसले के आधार पर वेतन का पुनर्निर्धारण किया जा सकता है।

(ङ) सामुहिक सौदेबाजी–के माध्यम से नियोजक और श्रमिकों के मध्य सामुहिक समझौते द्वारा वेतन का पुनर्निधारण किया जाता है।

वेतन निर्धारण व्यवस्था में सामुहिक सौदेबाजी को स्वाभिमान का स्थान मिलना चाहिये, परन्तु यह अनिवार्य रूप से व्यापक सहमति पर आधारित होनी चाहिए। इकाई स्तर की सौदेबाजी के लिये अगला संयंत्र पंत्र निर्णय होना चाहिये। उद्योग सम्बन्धी राष्ट्रीय सौदेबाजी के लिए एक वेतन मण्डल होना चाहिए। यदि स्थायी त्रिदलीय ऐसा चाहता है। संगठित उद्योगों में वेतनमण्डलों के सर्वमान्य निर्णय अनिवार्य रूप से माने जाने चाहिये, जबकि शेष को विधान मण्डलों अथवा संसद के लिये छोड़ देना चाहिये। जब सभी मार्ग बन्द हो जांय, तो अंतिम प्रयत्न अभिनिर्णय और न्यायाधिकरण द्वारा होना चाहिए। सरकारी कर्मचारियों के लिये एक नियत समय का वेतन आयोग होना चाहिये। असंगठित उद्योगों के लिये वेतन आयोग एवार्ड अथवा वेतन मण्डल के रिपोर्टों में परिवर्तनों की स्वीकृति के लिये विधान मण्डलों अथवा संसद के सम्मुख प्रस्तुत करना चाहिये।

अपने देश में मजदूरी के निर्धारण के लिए समझौतों और निर्णयों की रूढ़िवादी रीतियों का ही अत्यधिक प्रभाव हैं। सामूहिक सौदेबाजी की स्थिति इस प्रश्न पर नगण्य सी है। भृति हीनता एवं न्यून वृत्ति योजना (under employment) की विशाल संख्या तथा कृषि व असंगठित उद्योग में अकुशल श्रमिकों व मजदूरों की भारी भींड़ ने पूरे श्रम क्षेत्र को प्रभावित किया है। २॥ करोड़ से ऊपर की बेकारों की संख्या ने काम में लगे हुए कार्यकरों का मूल्य भी अत्यल्प कर दिया है। इस विषय में ट्रेड यूनियनें अशक्त और विवश भी है। अनेक ढंग होते हुए भी मजदूरी व वेतन के मामले में आज तक श्रमिक न्याय नहीं पा सका है।

एक बार वेतन निर्धारित हो जाने के उपरान्त यह भी नहीं कहा जा सकता कि वह हमेशा के लिये ठीक हो गया और समस्या समाप्त हो गई। वास्तव में नवीनतम तकनीकी विकास, श्रमिकों का कार्यभार, उत्पादन

तथा उत्पादकता में वृद्धि, उद्योग की आर्थिक स्थिति में सुधार राष्ट्रीय अर्थ व्यवस्था में प्रगति, मूल्य सूचकांक में बढ़ोत्तरी आदि के कारण श्रमिकों का निर्धारित वेतन जो कि उसको नकद में मिल रहा होता है, असल में उससे काफी पिछड़ जाता है जो कि उक्त परिस्थितियों में उसे मिलना चाहिए। श्रमिकों में उच्च जीवन स्तर की आकाँक्षा, बदलती हुयी सामाजिक एवं आर्थिक मान्यताओं राज्य की नीति आदि के कारण वेतन पुनर्निर्धारण की आवश्यकता एवं महत्व और भी बढ़ जाता है।

वेतन नीति

राष्ट्रीय वेतन नीति तय करने से पूर्व हम अपनी राष्ट्रीय अर्थनीति को प्रस्तुत करना चाहेंगे, जिसमें नियोजन, संगठन तथा समुचित प्राविधिक के माध्यम से देश के संसाधनों का पूर्ण उपयोग करते हुए जनता को पूर्ण रोजगार प्रदान कराया जा सके और तभी यथोचित रूप में मजदूरी नीति के निर्धारण में सफलता मिल सकेगी।

हम यह भी चाहेंगे कि श्रम को पूंजी के स्वामित्व में साझेदारी मिले ताकि राष्ट्रीय आधार पर क्रमिक श्रमिकीकरण की योजना अपनायी जा सके। साथ ही श्रमिकों को उत्पादकता लाभों में हिस्सा मिल सके।

राष्ट्र को सर्वोच्च सत्ता स्वीकार करने के कारण हम चाहेंगे कि सभी आर्थिक हित पक्षों उद्योगपति, लघु उद्योगपति, व्यापारी, किसान, मजदूर व उपभोक्ता आदि के प्रतिनिधियों का गोलमेज सम्मेलन बुलाया जाय, जिसमें उत्पादकता पूंजीनिवेश रोजगार, मूल्य, कर, आय जिसमें वेतन भी सम्मिलित है, आदि विषयों पर सम्मिलित रूप में चर्चा होकर राष्ट्रीय नीति निर्धारित हो, तभी सभी देशवासियों के साथ जिसमें मजदूर भी सम्मिलित है, न्याय हो सकेगा।